National Journal of Advanced Research
Online ISSN: 2455-216X; Impact Factor: RJIF 5.12
www.allnationaljournal.com
Volume 3; Issue 1; January 2017; Page No. 50-51

समाज में नारी की दशा

डॉ0 रेखा रानी जूड
सहायक प्रोफेसर (हिन्दी विभाग), बाबू अनन्त राम जनता कॉलेज ऑफ ऐजुकेशन कौल, कैथल, हरयाणा, भारत।

प्रस्तावना

नारी रूप की कल्पना न किए जाने पर ईश्वर को भी अपूर्ण माना गया है, नारी आदि शक्ति के रूप में पुरुष का अङ्गांग तथा जीवन का सृजन और पोषण करने वाला मातृपक्ष है। जीवन वात्सल्य और ममता के इसी मधुमय प्रवाह का मुखापेक्षी है।[1]

नारी से ही नर शक्तिवान कहलाता रहा है, सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर अब तक पाषाण काल से स्तूतनिक युग तक नारी नर के जीवन का पोषण एवं उन्नयन करती रही है। आज तक उसने अपनी ममता वात्सल्य त्याग, करुणा, कोमलता एवं मधुरता से पुरुष की कठोरता एवं रूक्षता को कम कर जीवन में एक स्निग्ध अजस्र प्रेम धारा बहाने में अपूर्व योग दिया है।[2]

वैदिक युग में नारी की छवि सामाजिक दृष्टि से सम्मानजनक थी, वह स्वच्छन्छता पूर्वक सामाजिक कार्यों में भाग लेती थी, पुरुष के समान प्रत्येक क्षेत्र में उसे समानाधिकार प्राप्त था । वैवाहिक दृष्टि से उस पर अंकुश न था । विवाह सम्बन्ध उसकी इच्छा से ही निष्पन्न होता था । विधवा विवाह पुनर्विवाह कर सकती थी । वह पिता और पति की सम्पत्ति में अधिकारिणी थी और उससे लाभान्वित भी होती थी ।[3]

उत्तर वैदिक काल में नारी की दशा में सामाजिक दृष्टि से पतन होने लगा ।[4] नारी को लेकर पुरुष की मानसिकता में अन्तर आने लगा । वह उसे अपने ऊपर आश्रित समझने लगा ।[5]

उत्तरोत्तर समय में नारी की सामाजिक दृष्टि से नारी और समाज के अन्त: सम्बन्ध की दृष्टि से स्थिति सुखद न थी । "रामायण और महाभारत काल में नारी की स्वतन्त्र सत्ता न थी । मुसलमानों के आक्रमणों एवं अत्याचारों के फलस्वरूप नारी की स्थिति और भी शोचनीय हो गई । फलत: उसकी स्थिति उत्तरोत्तर दृढ़ तथा सुन्दर होने के बदले दुर्बल और कुत्सित हो गई ।[6]

आर्थिक तंगी के कारण आज की शोषित नारी का सबसे वीभत्स रूप है - वेश्या बनना । "चूस जाते अंगों के मोती चूस जाता जब दलित शरीर सहसा अनाहूत आ जाता कौन उदर में लेकर नीर किन्तु कहाँ वह उदर भाग रह पाता है सुख से दो दिन पीसा करते हैं पिशाच दे रोटी के दो टुकड़े गिन-गिन माता बनी दूध भर आया किन्तु न भरता पापी पेट जननी बनकर भी पशुओं के आगे नग्न सकेगी लेट?[7]

वह निरन्तर आगे बढ़ना चाहती है और यदि उसकी राह में पति, पिता, माँ तथा भाई भी आते हैं तो उनके सामने प्रश्नयुक्त मुद्रा बनकर खड़ी हो जाती है । "वह सड़ना नहीं चाहती, निरन्तर बहना चाहती है, दूर-दूर निरुद्देश्य सी, लक्ष्यहीन सी पुरनिर्बध और उन्मुक्त । उसकी यह उन्मुक्तता उसके लिए वैयक्तिक प्रतिस्थापना के नये आयाम रचती है अथवा उसके व्यक्तित्व के टूटन और अनास्था भरती है यह अभी विवादास्पद है।[8]

आज की नारी कहती है - "मै कामायनी को श्रद्धा नहीं इडा हूँ भावना नहीं, प्रज्ञा हूँ, मात्र, स्पंदनमयी नहीं, तर्कमयी भी हूँ, मात्र समर्पिता नहीं, अधिकारमयी भी हूँ ।[9]

आज जो कुछ हो रहा है, उसे सुन-पढ़कर यह सोचने पर मजबूर होना पड़ता है कि 21वीं सदी की दहलीज पर पहुंचते-पहुंचते हम कहीं फिर 18वीं सदी में तो नहीं पहुँच गए? आज एक और महिलाओं के उत्थान के लिए करोड़ों रूपए की योजनाएं बन रही हैं और दूसरी ओर पहले से भी अधिक बर्बरतापूर्वक ढंग से कन्या हनन शुरू हो गया है ।

पहले लड़कियों को पैदा होने के बाद मारा जाता था, लेकिन अब पैदा होने से पहले ही मारा जाने लगा है । यहीं नहीं पहले कन्या की हत्या चोरी छिपे होती थी, अब खुले बाजार में बड़े-बड़े क्लीनिकों में की जा रही है जिसके लिए मां-बाप बड़ी-बड़ी रकमें भी देते हैं ।

लड़का पैदा होने पर लड्डू बंटते हैं लेकिन लड़की पैदा होने पर वैसी ही खुशी विरले लोग ही मनाते हैं, आमतौर पर यही सुनने को मिलता है - "और आ गयी मरजानी," नारी जाती पर इससे बड़ा प्रहार क्या होगा?

इस प्रकार नारी का व्यक्तित्व पूरी तरह 'छितरा' कर रह गया है । विविध प्रकार की भौतिक और भावनात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति के प्रयास करती हुई नारी कहीं समझौता करती है, कहीं विद्रोह करती है तथा कहीं अपने आपको टूटता हुआ महसूस करती है । यदि स्त्री अपने आपको टूटन से बचाने के लिए कोई कदम उठाती है तो परिवार में ही नहीं । बल्कि समाज में भी लांछन का शिकार बनती है और अन्तत: वह कुंठित और कुत्सित जीवन जोती है ।

सरकार द्वारा प्राय: महिलाओं की स्थिति बेहतर बनाने के लिए कानून बनाए जा रहे हैं और समयानुसार, पुराने, कानूनों में

संशोधन भी किए जा रहे हैं जो महिलाओं की स्थिति में सुधार कर सकते है ।

संदर्भ ग्रन्थ

1. डॉ॰ उषा पांडेय, मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य में नारी भावना, पृ॰ 13
2. डॉ॰ सावित्री डागा, आधुनिक हिन्दी मुक्तक काव्य में नारी, पृ॰ 3
3. शशि जैन, नारी और समाज, पृ॰ 219
4. डॉ॰ उषा पांडेय, मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य में नारी भावना, पृ॰ 16
5. महात्मा गांधी, टू दा वूमैन, पृ॰ 7
6. महादेवी वर्मा, श्रृंखला को कड़िया, पृ॰ 68
7. रामेश्वर शुक्ल 'अंचल, मधुलिका, पृ॰ 61
8. राजेन्द्र यादव, मन्नू भंडारी, एक इंच मुस्कान, पृ॰ 112
9. उर्मिला प्रकाश, "हिन्दी लेखिकाओं के उपन्यासों में पुरुष कल्पना, पृ॰ 69